बड़े घर की बेटी

प्रेमचन्द

हिन्दी के महान कथाकार प्रेमचन्द का जन्म 31 जुलाई 1880 ई. को वाराणसी के पास लमही नामक गाँव में हुआ था। उनका नाम धनपतराय रखा गया। 1907 में जब उनका कहानी संग्रह सोजेवतन राजद्रोहपूर्ण कहानियाँ लिखने के कारण जब्त कर लिया था तब इन्होंने अपना नाम प्रेमचन्द रख लिया। उनका कथा साहित्य उत्तर भारत के जन-जीवन का प्रतिनिधित्व करता है।

गौरीपुर गाँव के ज़मीन्दार बेनीमाधव सिंह के बेटे थे श्रीकण्ठसिंह और लाल बिहारी सिंह। उनके परिवार का पुराना वैभव उजड़ गया था। श्रीकण्ठसिंह बी.ए डिग्री प्राप्त करने के बाद सरकारी नौकरी करता था। वह सौम्य प्रकृति का था और अंग्रेज़ी शिक्षा प्राप्त करने पर भी अंग्रेज़ी जीवन शैली का विरोध करता था। वह इलाहाबाद में काम करता था और शनिवार को घर आया करता था। उसके स्वभाव तथा शिक्षा के कारण सब उसका सम्मान करता था। श्रीकण्ठसिंह का विवाह एक छोटी रियासत के तालुकेदार भूपसिंह की बेटी आनन्दी से हुआ। आनन्दी अपने पिता के सात लड़कियों में चौथी लड़की थी और वह सुन्दर और सुशील थी।

श्रीकण्ठ का छोटा भाई लाल बिहारी सिंह अपढ़ एवं उजड्ड था जो कसरती बदन का युवक था। एक दिन वह एक चिड़िया को लेकर आया और आनन्दी से उसे पकाने को कहा। लाल बिहारी भोजन करने बैठा तो दाल में घी न डालने का कारण पूछा। आनन्दी ने कहा कि

VTMNSS COLLEGE LIBRARY

घर में थोड़ा सा घी बचा था जिसे उसने मांस में डाल दिया। यह सुनकर लाल बिहारी को गुस्सा आया और उसने आनन्दी और उसके मायके की निन्दा करने लगा। यह सुनकर आनन्दी से सहा नहीं गया। उसने कहा कि उसके घर में इतना घी तो नित्य नाई कहार खा जाते हैं। इससे लाल बिहारी जल उठा और उसने खड़ाऊँ उठाकर आनन्दी की ओर फेंक दी। आनन्दी ने हाथ से खड़ाऊँ रोकी इसलिए सिर बच गया पर अंगुली में बड़ी चोट आयी।

शनिवार को श्रीकण्ठ आया तो आनन्दी ने रोते हुए सारी बातें उससे बतायीं। यह सुनकर श्रीकण्ठ जल उठा, उसकी आँखे लाल हो गयी। उसने अपने पिता से कहा कि अब वह उस घर में नहीं रह सकता जहाँ उसके पीछे उसकी पत्नी पर जूतों की बौछार होती है। पिता ने उसे समझाने की कोशिश की कि औरतों का इस तरह सिर चढ़ाना अच्छी बात नहीं। उन्होंने लाल बिहारी का पक्ष लेकर आनन्दी को गलत साबित करने की भी कोशिश की। लेकिन श्रीकण्ठ अपने भाई का अत्याचार सहने को तैयार नहीं था। उसने कहा कि वह ऐसे भाई का मुँह तक देखना नहीं चाहता। लाल बिहारी अपने बड़े भाई का बड़ा आदर करता था। वह अपने भाई की ये बातें सुनकर दुःखी हो गया। वह खुद घर छोड़ जाने को तैयार हो गया। वह रोते हुए श्रीकण्ठ से क्षमा माँगने के लिए उसके कमरे के द्वार पर आ गया। लेकिन श्रीकण्ठ ने उसे देखकर घृणा से आँखें फेर लीं। लाला ने आनन्दी से कहा

VTMNSS COLLEGE LIBRARY

कि वह घर छोड़कर जा रहा है। यह सुनकर आनन्दी ने अपने पति से उसे रोकने को कहा। लेकिन वह तैयार नहीं हुआ। तो आनन्दी ने अपने देवर का हाथ पकड़कर उसे रोक लिया। अन्त में श्रीकण्ठ का भी दिल पिघल गया और उसने अपने भाई को गले से लगा लिया। यह देखकर बेनीमाधव सिंह ने कहा कि बड़े घर की बेटियाँ ऐसी ही होती हैं, बिगड़ता हुआ काम बना लेती हैं।

इस कहानी के द्वारा प्रेमचन्द इसी बात को स्पष्ट करते हैं कि परिवार की एकता एवं शांति बनाये रखने का कार्य घर की औरतें करती हैं। बड़े घर की बेटी होने के कारण आनन्दी में अच्छी संस्कृति है और वह अपने देवर की गलतियों को माफ कर लेती है। इस तरह यह शीर्षक भी सार्थक हो जाता है।

गिल्लू — महादेवी वर्मा

महादेवी वर्मा का जन्म 1907 ई. में फरुखाबाद के एक प्रतिष्ठित कायस्थ परिवार में हुआ। संस्कृत में एम. ए करने के बाद वे प्रयाग महिला विद्यापीठ की प्राचार्या बनीं। 1987 को आप का निधन हुआ। 'मेरा परिवार' नामक संग्रह से लिया हुआ एक संस्मरण है गिल्लू, जिसमें आप ने एक गिलहरी को मानवीय संवेदना के व्यापक धरातल पर प्रतिष्ठित किया है।

VTM NSS COLLEGE LIBRARY

एक सवेरे कमरे से बरामदे मे आने पर महादेवीजी की दृष्टि गमले के नीचे छिपे एक छोटे से जीव पर पड़ी। वह गिलहरी का एक छोटा बच्चा था जो शायद घोसले से गिर पड़ा था। दो कौए उसे खाने की कोशिश कर रहे थे। लेखिका ने उसे उठाकर अपने कमरे में लाया और रूई से रक्त पोंछकर घावों पर पेन्सिलिन का मरहम लगाया। रूई की पतली बत्ती दूध में भिगोकर उसे दूध पिलाया। तीसरे दिन वह बहुत आश्वस्त हो गया। तीन-चार मास में उसके स्निग्ध रोएँ, झब्बेदार पूँछ और चंचल चमकीली आँखें सबको विस्मित करने लगीं। उसका नाम गिल्लू रखा गया। लेखिका ने फूल रखने की एक हल्की डलिया में रूई बिछाकर उसे तार से खिड़की पर लटका दिया, गिल्लू का यही घर रहा।

गिल्लू के जीवन का प्रथम वसंत आया। बाहर की गिलहरियाँ खिड़की की जाली के पास आकर चिक-चिक करने लगीं। लेखिका को लगा कि गिल्लू उनके साथ जाना चाहता है। इसलिए उन्होंने कीलें निकालकर जाली का एक कोना खोल दिया और इस मार्ग से गिल्लू बाहर निकल गया। जब लेखिका कमरे से बाहर जाती थी तब गिल्लू भी बाहर जाता था और ~~[illegible]~~ ठीक चार बजे वह खिड़की से भीतर आकर झूले में झूलने लगता।

लेखिका के पास बहुत से पशु-पक्षी थे। उनमें से किसी को भी

VIMNSS COLLEGE LIBRARY

उनकी थाली में उनके साथ खाने की हिम्मत नहीं हुई। लेकिन गिल्लू इन में अपवाद था। जब वे खाने के लिए आती तब गिल्लू भी उनके साथ मेज़ पर पहुँच जाता था और थाली में बैठना चाहता था। बड़ी कठिनाई से उन्होंने उसे थाली के पास बैठना सिखाया और वह वहाँ बैठकर थाली में से एक-एक चावल उठाकर बड़ी सफाई से खाता था।

मोटर दुर्घटना में आहत होकर लेखिका कुछ दिन अस्पताल में रहीं तो गिल्लू दुःखी रहता था। उनकी अस्वस्थता में वह तकिये पर बैठकर अपने नन्हे-नन्हे पंजों से लेखिका के सिर और बालों को सहलाता रहता था।

गिलहरियों के जीवन की अवधि दो वर्ष से अधिक नहीं होती। गिल्लू की जीवन यात्रा का भी अंत आ गया। दिन भर उसने न कुछ खाया, न बाहर आया। ~~आँगन में~~ रात में अंत की यातना में वह लेखिका की उँगली पकड़कर उनके बिस्तर पर रहा। प्रभात की प्रथम किरण के स्पर्श के साथ उसकी जीवन यात्रा समाप्त हो गयी। लेखिका ने उसे सोनजुही की लता के नीचे समाधि दी। उसके बाद सोनजुही में जब पीली कली लगती थी तब लेखिका को गिल्लू की याद आती थी।

VTM NSS COLLEGE LIBRARY

शिवजी की बारात

विद्यानिवास मिश्र

डॉ. विद्यानिवास मिश्र का जन्म गोरखपुर जनपद के पकड़डीहा गाँव में हुआ। संस्कृत में एम.ए तथा पी.एच.डी करने के बाद अनेक उच्च संस्थानों तथा विश्वविद्यालयों में उन्होंने अध्यापन का कार्य किया। 'शिवजी की बारात' आपका एक व्यंग्य निबन्ध है।

पहली पत्नी सती देवी जलकर मरी तो शिवजी शोक में पागल रहे और विरक्त होकर भूत-प्रेतों की संगति में श्मशान में तपस्या करने लगे। कैलास का आश्रम उजड़ गया। वहाँ के भण्डारी कुबेर अलकापुरी में ताला लगाकर इन्द्र के दरबार में मुजरा करने चले गए। गणेशजी को रसोई का काम सँभालना पड़ा जिससे उसका बुरा हाल हो गया। नन्दी को चारा मिलना बन्द हो गया तो श्मशानों में फेरी लगाने से वे असहयोग करने लगे।

लेखक का कहना है कि शिवजी के कैबिनेट में गणेशजी चीफ सेक्रेटरी का काम करते हैं और भैरवजी रक्षा विभाग, कुबेर वित्त मंत्री का काम तथा नन्दी विदेश मंत्री का काम सँभालते हैं। सती के निधन से गृहमंत्री का पद रिक्त हो गया। और गृहमंत्री के अभाव में सब-कुछ उथल-पुथल हो गया। घर में गृहिणी का महत्व इससे स्पष्ट होता है। शिवजी ने कैबिनेट की बैठक बुलाई तो भांग का कोटा बढ़ाने की माँग करते हुए भूतों ने प्रदर्शन शुरू किया। कुबेर ने सूचित किया कि आर्थिक स्थिति चौपट है।

VTM ISS COLLEGE LIBRARY

नन्दी ने निवेदन किया कि शीघ्र गृह विभाग पर कोई नियुक्ति हो जाए और भैरव ने कहा कि राशन की कटौती अधिक करने पर सेना में विद्रोह फैलने की आशंका है। इन कारणों से गृहमंत्री का पद रिक्त नहीं रखा जा सकता। प्रधानमंत्री शिवजी को जल्दी दूसरी शादी करनी है।

कुबेर ने नारद से मिलकर साजिश करके हिमालय की कन्या पार्वती के मन में शिवजी से शादी करने की चाहत उत्पन्न की। ब्रह्मा ने सप्तर्षियों को कन्या निरीक्षण केलिए भेजा। इससे संतुष्ट न होकर स्वयं शिवजी ने भेस बदलकर तप करती पार्वती का परीक्षण किया और उन्हें कन्या पसन्द आयी। बारात हिमालय के आंगन में आयी। सास वर का आरती उतारने आयी तो उन्हें देखकर उनके हाथ से थाली छूटकर गिर पड़ी। पार्वती ने शिवजी को विष्णू के रूप का ध्यान करने को इशारा किया। विष्णू के रूप का ध्यान करने पर शिवजी के साँप का फण पुष्पमुकुट बन गया, जटा स्निग्ध कुंतलराशि में बदल गयी और गजचर्म हँस दुकूल बन गया। वर मण्डप में प्रवेश करने जा रहे थे तब गणेशजी को भूख लगी। चार सेर लड्डू लाकर गणेश पूजा हुई और उसके बाद विधि-विधानपूर्वक विवाह संपन्न हुआ। छः महीने हिमालय के यहाँ रहने के बाद ~~हंडा सुहा~~ दहेज के रूप में बावन हंडा सुहागा के साथ बारात विदा हुई।

शिव के घर पहुँचते ही मंत्रियों की दुर्व्यवस्था देखकर पार्वती ने उनसे जवाब तलब करना शुरू किया। ऐसे में मंत्रिमण्डल ने

VTM NSS COLLEGE LIBRARY

चुपचाप इस्तीफा भेज दिया। पार्वती ने संकटकालीन स्थिति की घोषणा करके राज्यपालिका बनकर शासन की बागडोर अपने हाथ में ली। पर्सनल सेक्रेटरी गंगा को उन्होंने कैलास से निष्कासित किया। बूढ़े शिवजी यह सब देखकर चुप रहे।

लेखक का कहना है कि शिवजी की बारात ने एक नये इतिहास का निर्माण किया। बारात की मौजूदा प्रथा का प्रारंभ उसी दिन से हुआ। राजशासन में बूढ़े लोगों को दूसरी शादी करने का अधिकार मिला, विवाह में गणेशजी की द्वारपूजा अनिवार्य अंग बनी, बैल की प्रतिष्ठा हुई तथा दूसरे विवाह की पत्नी पाती कहलाए पाती बनी। इन परंपराओं में शिवजी की बारात अमर हो गयी।

VTM NSS COLLEGE LIBRARY

स्वामी दयानन्द

आधुनिक हिन्दी साहित्य के प्रमुख नाटककार एवं कहानीकार हैं श्री मोहन राकेश। 1925 ई. को अमृतसर में उनका जन्म हुआ। आधे-अधूरे, आषाढ का एक दिन, लहरों के राजहंस - ये उनके प्रमुख नाटक हैं। प्रसिद्ध पत्रिका सारिका के संपादक के रूप में वे सेवा करते रहे। आधुनिक युग के जीवन की विभिन्न समस्याओं को आधार बनाकर उन्होंने साहित्य रचना की। नाटक एवं कहानी के अलावा उपन्यास, निबन्ध, यात्रा-वर्णन, जीवनी साहित्य आदि को भी उन्होंने अपनी उपस्थिति से समृद्ध किया। 1972 में उनकी मृत्यु हुई। स्वामी दयानन्द के जीवन एवं प्रवर्तन पर प्रकाश डालनेवाली है 'स्वामी दयानन्द' नामक मोहन राकेश द्वारा रचित जीवनी।

काठियावाड के टंकारा नामक गाँव में स्वामी दयानन्द का जन्म हुआ। बचपन में उनका नाम मूलशंकर था। उनके पिता एक संपन्न ज़मीन्दार थे। वे अपने बेटे को ऐसी शिक्षा देना चाहते थे जिससे वे बडा होकर घर की परंपरा को ~~आगे~~ बनाये रखे। चौदह वर्ष की अवस्था में एक बार मूलशंकर अपने पिता के साथ शिवरात्री व्रत की पूजा-पाठ केलिए गाँव के बाहर के एक मन्दिर में गए। आधी रात के बाद बाकी के भक्त लोग सोने लगे, लेकिन ~~सब~~ उन्हें अपनी गहरी आस्था के कारण नींद नहीं आयी। वे शिव प्रतिमा को देखते रहे। अचानक एक चूहा आकर भगवान को चढाई गयी भोग की सामग्री खाने लगा तो उनका मन अशान्त हो उठा। उनके मन में अनेक सवाल उठने लगे। उनके सवालों का संतोषजनक उत्तर किसी से भी नहीं मिला। कुछ समय बाद उनकी बहन और चाचा की मृत्यु हो गयी जिससे वे बहुत दुःखी हो गए। फिर धीरे-धीरे उनका मन घर से विरक्त होने लगा। वे असंतुष्ट रहने

लगी। यह देखकर घरवालों ने उनकी शादी करवाने का निर्णय लिया तो वे चुपचाप घर छोड़कर चले गए।

मूलशंकर एक गुरु की खोज में भटकते रहे। स्वामी पूर्णानन्द से उनकी मुलाकात हो गयी और उनसे सन्यास लेकर उन्होंने दयानन्द नाम स्वीकार किया। हरिद्वार के कुंभ मेले में धर्म के नाम पर हो रही कुरीतियों को देखकर उनके मन में बहुत ग्लानि हुई। वे इन सबको दूर करना चाहते थे। इस के लिए किसी के मार्ग-दर्शन की आवश्यकता थी। उन्हें एक योग्य गुरु की तलाश थी। अन्त में वे मथुरा में रहनेवाले स्वामी बिरजानन्द नामक नेत्रहीन ब्राह्मण के पास पहुँच गए। स्वामी बिरजानन्द संस्कृत व्याकरण के पण्डित थे। उन्होंने वेदों की मौलिक व्याख्या की थी। उन्हें एक ऐसे शिष्य की तलाश थी जो उनके विचारों को लोगों तक पहुँचाये। दयानन्द को शिष्य के रूप में पाकर वे अतीव संतुष्ट हुए। ढाई वर्ष गुरु के साथ रहकर दयानन्द ने संस्कृत व्याकरण एवं वैदिक साहित्य का अध्ययन किया। उसके बाद गुरु ने उन्हें चारों ओर फैले अविद्या एवं अंधकार को दूर करके देश में ज्ञान और विद्या का प्रकाश फैलाने का निर्देश दिया। इसके लिए वे निकल पड़े।

उस समय विदेशी राज्य सत्ता ने देश की सांस्कृतिक एवं नैतिक मूल्यों को लगभग तोड़ दिया था। देश का मानसिक जीवन अन्धविश्वासों में खोखला हो गया था। लोग कायर हो गये थे। उन्हें सिर्फ अपनी अपनी चिन्ता थी। जाति भेद, बाल-विवाह, विधवाओं के प्रति अमानुषिक व्यवहार आदि प्रचलित था। स्त्रीयों को उच्च शिक्षा का अधिकार दिया नहीं जाता था। इस स्थिति का फायदा उठाकर ईसाई पादरी अपने धर्म का प्रचार कर रहे थे। दयानन्द ने ऐसी परिस्थितियों से एक साथ

लड़ने का निर्णय लिया।

पूरे देश में वे भ्रमण करना आरंभ किये। उनकी वाणी में जो जादू था वह लोगों को प्रभावित किया और लोग अनायास उनके अनुयायी बनने लगे। वे हरिद्वार पहुँच गये तो वहाँ के पंडों के पाखण्ड और साधुओं के आडम्बर देखकर उन्होंने वहाँ अपनी पाखण्ड खण्डिनी पताका गाड दी और लोगों को वे वास्तविक आर्य धर्म का उपदेश देने लगे। पंडों ने उनका विरोध किया, लेकिन लोग दयानन्द के साथ थे।

बहुत से लोग उनके शिष्य बनने लगे। रूढ़िवादी उनके शत्रु हो गए और वे कई बार उन्हें हानि पहुँचाने की कोशिश की गयी। एक बार अनूप शहर में उन्हें विष दिया गया। लेकिन उन्होंने यौगिक क्रिया के द्वारा विष को बाहर निकाल दिया। कर्णवास के गंगास्नान मेले में भाग लेने के लिए वे वहाँ पहुँचे। वहाँ के भाषण के बाद बरेली के राय कर्णसिंह उनसे वाद-विवाद करने लगे। पराजय होने पर कर्णसिंह उन पर तलवार से वार करने लगे तो दयानन्द ने तलवार छीनकर उसके दो टुकड़े कर दिये और बोले, "मैं सन्यासी हूँ। तुम पर वार करके बदला नहीं लूँगा। जाओ, भगवान तुम्हें सुबुद्धि दे।"

स्वामी दयानन्द का कार्यक्षेत्र सारा उत्तर भारत था, फिर भी उन्हें अधिक सफलता पंजाब, उत्तर प्रदेश और राजस्थान में मिली। लगभग अठारह वर्ष वे अपने सिद्धान्तों का प्रचार करते रहे। कहा जा सकता है कि उन्होंने प्राचीन और नवीन के बीच एक कड़ी का काम किया। 10 अप्रैल 1875 को बंबई में उन्होंने आर्य समाज की स्थापना की। सन् 1883 को जोधपुर के महाराजा ने स्वामी दयानन्द को अपने यहाँ निमंत्रित किया। वहाँ राजा के अतिथि के रूप में रहकर वे जनता को उपदेश देते रहे। उस समय उन्हें पता चला कि महाराजा एक वेश्या से प्रेम करते हैं। उन्होंने इस

VTM NSS COLLEGE LIBRARY

बात की निन्दा की तो वह वेश्या उनका शत्रु बन गयी। रसोइए से मिलकर उसने स्वामी दयानन्द को विष खिला दिया। 1883 की दिवाली के दिन उनका स्वर्गवास हो गया। भारत के सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक तथा धार्मिक क्षेत्रों में उन्होंने जो स्थापनाएँ सामने रखीं, उन्हीं के आधार पर समाज का मानसिक पुनर्गठन संभव हो सका।

VTM NSS COLLEGE LIBRARY